अध्याय पांच

डॉ० एस० बी० एल० सवसेना
वित्तकला के एक अध्यापक के रूप में

➤ शोध का शिक्षण
➤ कला शिक्षण के अनुभव
➤ कला शिक्षण में कला शिक्षक का व्यवहार
➤ कला शिक्षक के रूप में सुधार के सुझाव
➤ स्वतंत्र भाव चित्रण
➤ चित्रों को बनाने की विधि एवं तकनीक

शीर्ष प्रबन्ध 2008, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झोंपी,
डॉ० एस० बी० एल० सक्सेना

विचित्रकला के एक अध्यापक के रूप में

डॉ० सक्सेना ने प्राथमिक शिक्षक के रूप में कार्य प्रारम्भ किया था। लेकिन यह उनकी असीम प्रतिभा एवं इच्छा शक्ति थी कि वह शिक्षा के उच्च पायादान को छूटने में सफल रहे। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में उतर कर उन्होंने नयी आयाम विकसित किये और चित्रकला विषय में अपना शोध प्रस्तुत किया जो कि भारत में चित्रकला का प्रथम शोध ग्रन्थ था। यह उनकी विषय के प्रति आसक्ति एवं समर्पण को ही व्यक्त नहीं करता, बल्कि बताता है, कि चित्रकला को उन्होंने अपने अंतःकरण में किस तरह समाहित कर रखा है। आज वे जीवित किवड़ती के रूप में हमारे समक्ष उपलब्ध है।

वे अभी भी अपने अभिकल्प इस दिशा में बनाये हुए हैं।

डॉ० सक्सेना ने प्राथमिक शिक्षा से लेकर विश्वविद्यालय शिक्षण में योगदान दिया है। प्रत्येक स्तर पर वे उत्कृष्ट शिक्षक रहे हैं। उन्होंने सन 1956 से 1969 तक गाँधी स्मारक इंटर कॉलेज एटा में छोटी कक्षा से इंटर तक कला शिक्षण प्रदान किया।

डॉ० सरन जी के प्रयास व प्रबन्ध तंत्र के सहयोग से इस विद्यालय में शासन ने इंटरमीडिएट की कक्षाओं को बढ़ाने के लिए चित्रकला विषय

1 डॉ० एस०बी०एल० सक्सेना से वार्ता पर आवश्यक।

शोध प्रबन्ध 2008, बुंदेलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी।
की अनुमति प्राप्त हुई थी। जिसमें डॉ० सकसेना जी का बड़ा योगदान रहा।
इन्होंने शिक्षण में सदा ही ईमानदारी से अपने कर्तव्य का निर्वाह किया।
साथ ही साथ छात्रों की आवश्यकता को देखते हुए उनकी कुशलता के
अनुसार स्थापित व सरल तरीके से शिक्षण कार्य किया। इसी कारण छात्रों
की कला के प्रति न केवल समझ बढ़ी बल्कि उनका रुझान कला की ओर
बढ़ गया।

जब आपने कॉलेज में शिक्षण कार्य आरम्भ किया तो उनका उत्साह व
लगान और अधिक बढ़ गयी। साथ ही कर्तव्य निष्ठा अपनी पूरी पराकाष्ठा पर
पहुँच गयी। डॉ० सकसेना उच्च शिक्षा में कला के अध्ययन के महत्व से
वाकिफ थे। डॉ० सरन जी बताते है कि जब उन्होंने विश्वविद्यालय स्तर पर
शिक्षण कार्य आरम्भ किया तो उन्होंने रेखांशित रूप से इस बात पर जोर
dिया। कि शिक्षक को अपने विषय का अधिकतम ज्ञान होना चाहिए। इसी
बात को ध्यान में रखकर उन्होंने कलात्मक सृजन व पादयक्रम सम्बन्धी ज्ञान
व अपने शिक्षण को आधारभूत तत्व मान लिया। वे बताते हैं कि उन्होंने
निसंकोच तत्कालीन चित्रकारों व कलाविदों से पढ़ना लिखना लगातार
बनाये रखा। जिसका परिणाम यह हुआ कि वे आरम्भ से ही कला शिक्षक के
रूप में प्रतिस्थापित होकर कला शिक्षण की एक महत्वपूर्ण कर्म बन गये। वे
बताते हैं कि बिना पूर्व सैद्धांतिक अध्ययन कला शिक्षण की होकर वे
कलास में जाने के पूर्व वे अध्ययन करते थे। इतना ही नहीं वे लेसन ध्यान
को सदैव ध्यान में रखकर शिक्षण किया करते थे। उनका मानना पूर्णता:
सही है कि एक शिक्षक को अपने शिक्षण में पूर्णत: लाने के लिए पूरी कमर
कस के पढ़ाई करना चाहिए। आपका मानना था, कि कला में भाव की
अभिव्यक्ति ही कला की पूर्णत: प्रदान करती है। आप मानते है कि छात्र की
मनोस्थिति को जानकर उसकी प्रतिभा को निखारना चाहिये। शिक्षक ही छात्र को उचित ग्राह्यवाद प्रदान करके उसके कलात्मक रूढ़िवाद को निखार सकता है। वे भताते हैं कि उन्होंने छात्रों को बलपूर्वक या उनकी अनिवार्य से जबरदस्ती किसी कार्य अथवा चित्रण के अध्ययन के लिए बाध्य नहीं किया, बल्कि इसमें छात्र की अभिविश्वास की महत्ता पर वचन दिया।

डॉ० सक्सेना ने बरेली कॉलेज, बरेली में बेचलर एवं मास्टर डिग्री में कला शिक्षण आर्थिक विश्लेषण परिणाम सकारात्मक रही। कॉलेज में पृथिवी विषय के रूप में कला विभाग स्थापित हुआ। इस विभाग को डॉ० सक्सेना द्वारा दिए गए अमूल्य निर्देशन की परिणति यह रही कि लगातार 10 वर्षों तक इसी संकाय के छात्रों ने विश्वविद्यालय परीक्षा में अपना परचम लहराये सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त किया।

डॉ० सरन एक साधक रूप में अपने कर्तव्यों का निर्वाहन करते रहे और उन्होंने विभाग के महत्व को समझा। समय को अमूल्य निम्नता भरते हुए उसे व्यर्थ न गवाने की सलाह छात्रों को दी। डॉ० सरन आठ बजे के पूर्व ही कॉलेज परिसर में उपस्थिति दर्ज कर देते थे और अपराह्न 6 बजे वीसि पर की राह पकड़ते थे। अनुशासन व चरित्र को डॉ० सरन बिहारी जी सफलता की कुंजी मानते थे। अनुशासन के मामले में तो वे अत्यधिक कठोर थे। जिससे छात्र-छात्राओं उनके सामने बोलने की हिम्मत नहीं कर पाते थे।

छात्र-छात्राओं उनका अत्यधिक आदर भी करते थे, क्योंकि वे असीम दयालु प्रवृति के थे। डॉ० सहब कुछ निर्धारित छात्रों की फीस भर दिया करते थे। वे कागज, ब्रश रंग जैसी सामग्री दे दिया करते थे। वह दृष्टिन परम्परा के धोर विरोधी रहे हैं उन्होंने पैसा लेकर कभी भी दृष्टिन नहीं दिया।

1 डॉ० एसबीएलएल सक्सेना ने सवाल बताया।
2 डॉ० एसबीएलएल सक्सेना से वाले पर आवादित।

शोध प्रबंध 2008, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झासी।
बल्कि जिन छात्रों को अतिरिक्त निर्देशन की आवश्यकता होती थी, तो वह अतिरिक्त समय देकर निशुल्क दिया करते थे। उनकी यह श्रेष्ठ प्रबुद्धताओं
छात्रों को प्रभावित करती थी।

डॉ० बिहारी जी जिस तरह अखिल भारतीय रूप से कलाविद्य के रूप में जाने जाते हैं। उसी तरह से अपने परिचितों में वे अंग्रेजी भाषा के एक
अच्छे आलेखक माने जाते हैं। अंग्रेजी पर जिस तरह की उन्होंने पकड़
बनायी, वह किसी विज्ञान इमेज से कम नहीं थी। गणित जैसे कठिन विषय
पर भी श्रीमान् जी का आचार वर्चस्व रहा, लेकिन स्वाभाविक उनकी अभिरुचि
में शामिल रहा था। अतिरिक्त समय में किताबें पढ़ना और अच्छी किताबों
का संकलन करना डॉ० साहब का शोक रहा है। डॉ० साहब के घर का
एक कमरा एक छोटी लाइब्रेरी की तरह है, जिससे अनेकानेक अनूठी
काव्यात्मक एवं गद्यात्मक पुस्तक सामग्री दिखाई देने में सक्ति है।

अध्ययन अध्यापन से इतर बिहारी जी खेलकूद को भी महत्वपूर्ण मानते
थे। डॉ० सक्सेना जी की सुदृढ़ विविधता के कारण कला जैसा जटिल विषय
कला छात्रों के लिए समझने में सरल बन गया। यह सरलता उनके कठिन
तप का परिणाम है। नित-प्रति अध्यापन करके सीखों में श्रीमान् जी का
असीम विश्वास रहा है। अतः वे फल के नहीं बल्कि कार्य करने के धोतरक
जान पढ़ते है। निष्काम कार्य के सम्पादन हेतु डॉ० साहब बल देते रहे है।

डॉ० सरन ने कला शिक्षण का कार्य विभिन्न स्तरों पर किया है क्योंकि
आरम्भ से ही उन्होंने कक्षा शिक्षण को अपना निर्देशक लक्ष्य माना है। जब
हाईस्कूल के बच्चों को आप कला पढ़ाते थे तो उस समय स्वयं आप तरह
tरह के कागज कटिङ करके सुन्दर-सुन्दर विभिन्न प्रकार के फूल पत्तियाँ

---

1 डॉ० एस.बी.एल सक्सेना ने स्वयं बताया

शोध प्रबन्ध 2008, बुद्धपूर्ण विश्वविद्यालय, जोंपी.
पशुपक्षियों आदि का कागज द्वारा क्रापट कार्य कराया करते थे। तथा पेप्टल रंगों से वस्तु चित्रण तथा प्रकृति चित्रण कराया करते थे।

डॉ. सरन जब कला प्रवक्ता हुई तो तब उन्होंने इंटरमीडिएट और बाम्बे आर्ट की परीक्षा की तैयारी करने में छात्रों को सहयोग दिया और अपने शिक्षण का योगदान दिया। व्यक्तियों कला में भी आपकी विशिष्टता थी।

इस कारण आपने व्यक्तियों कला के शिक्षण में भी अपना योगदान दिया। डॉ. सरन ने चित्रकला के प्रयोगात्मक कार्य व शिक्षण का भी ज्ञान कराया। अनोएर पूर्ववर्ती एवं उत्तरार्द दोनो ही कक्षाओं में डॉ. सरन ही लिखित प्रश्न-पत्रों का शिक्षण कराते और उन प्रश्न-पत्रों की सैद्धांतिक तैयारी कराते थे। उनका कला विषय का ज्ञान चरमोक्षक रहा था। सारे देश के लक्षण कपड़े लगे जो उच्चतरीय कलाकारों की गिनती में आते थे, उनसे कला शिक्षण का विषयक ज्ञान लिया करते थे। क्योंकि कला एक प्रयोगात्मक विषयक पहले रहा है। बाद में सैद्धांतिक, इसलिए बहुधा कलाकारों को इस का विषयक ज्ञान नहीं होता ही होता है। यही कारण है कि डॉ. सरन ने कला शिक्षण के लिए कई उपयोगी पुस्तकें लिख दी जिसका लाभ आज प्रस्तुत अध्यापक अपने कला शिक्षण में कर रहा है।

शोध का शिक्षण

कला शोध का शिक्षण कराना यूं तो इतना आसान कार्य नहीं था,
लेकिन डॉ. सरन के कला विषयक ज्ञान की पकड़ के कारण यह अत्यत सरल सा हो गया था। क्योंकि उनका शिक्षण का अपना अलग तरीका है।
जिससे विद्यार्थियों सहज रूप से अपने शोध के गतिविधि तक पहुंच जाता है।
वस्तुतः कला शोध का शिक्षण कराना आसान नहीं है, जटिल विषय के विभिन्न पहलुओं से गुजरना पड़ता है। कई तरह की खोज बीन करनी
पढ़ती हैं! जिसमें विद्यार्थी कभी-कभी भयाक्रान्त सा हो जाता है और विषय से हट जाता है। या पूर्ण निष्ठा से शोध नहीं कर पाता है क्योंकि शोध शिक्षण कोई भी सहज रूप से नहीं कराता या फिर खूं कहें कि उन्हें विषयक ज्ञान का आभाव होता है। तो छात्र भी येन-केन-प्राकारण अपना शोध ग्रन्थ पूरा कर ही लेता है। वास्तविकता क्या है? इससे न तो शोधार्थी को कोई सरोकार होता है और न ही शोध का शिक्षण कराने वाले को होता है। जिनके अस्पष्ट विषयक ज्ञान और ठोंडा शिक्षण के गलत तरीके की काली छाया शोधार्थी पर पढ़ती हैं।

डॉ० सरन के अनुसार शोध का शिक्षण अर्थात पूर्ण विषयक ज्ञान ही होता है। क्योंकि पूर्णतः के बिना शिक्षण अधूरा ही रह जाता है और शोधार्थी अक्सर सत्य की खोज से भटक जाता है। जिसका पूर्णतया दोषी एक शिक्षक व उसका अधूरा ज्ञान ही होता है। डॉ० सरन तो वैसे भी सभी कलाविदों में शोध के शिक्षण के विशेषज्ञ माने जा रहे हैं। क्योंकि उनका शिक्षण विषय की समग्र पूर्णता एवं सत्यता को इंगित करता है। इसलिए उनकी शोध शिक्षण की पहुँच शोध विषय के प्रत्येक बिन्दु को सुस्पष्ट करके विश्वासित सत्य को उजागर करती है, जिससे शोधार्थी की सारी कठिनाईयां दूर होने लगती है और उसको शोध से प्रेर होने लगता है।

कला शिक्षण के अनुभव

डॉ० सरन के अनुसार कला शिक्षण के मिन्न-मिन्न अनुभव जो उनको समय-समय पर उनके जीवन से प्राप्त हुये उसके विषय में डॉ० सरन स्वयं बताते हैं कि उन्होंने प्रारम्भिक कक्षाओं से लेकर विश्वविद्यालयी स्तरीय कला शिक्षण का कार्य किया है उनका अनुभव है—

कि कला के अधिकांश छात्र व छात्राएं कला सूजन में रुचि रखते हैं
लेकिन उनकी रूचि की भिन्नता के कारण जब सामान्य शिक्षा पद्धति का संचालन किया जाता है तो उन्हीं छात्रों, जिनमें कला के प्रति जन्मजात प्रवृत्ति होती है वे स्वाभाविक रूप से रूचि लेने लगते हैं और शेष छात्र शिक्षण में मजबूती से सलाम्न होते हैं। यह बात अधिकतर कला शिक्षण के प्रत्येक स्तर पर पायी गयी है।

कला शिक्षण में कला शिक्षक का व्यवहार

कला के विद्यार्थियों में कला के प्रति छुपे हुये उद्देश्यों को विकसित करने में कला अध्यापक की अहम भूमिका होती है। अध्यापक छात्रों के कलात्मक एवं सृजनात्मक कार्यों में बहुत सहयोगी होता है। वह सरना का अनुभव है कि जिन बच्चों में शिक्षक से जुड़ने की तीव्र प्रवृत्ति होती है और कुछ सीखने की लालसा है तभी शिक्षक अपना भरसक प्रयास करके उनको कला के प्रति जागृत करने की चेष्टा करता है। समय पर कला शिक्षक उनको बहुत ठोड़ा सा दर्शन भी देने का प्रयत्न करता है। ऐसे छात्र कला के प्रति विशेष रूचि लेने लगते हैं तथा सुयोग्य कला अध्यापक का शिक्षण एवं मार्ग-दर्शन पाकर वे भविष्य में एक नया इतिहास रचने में समर्थ हो जाते हैं। लेकिन इसके लिये कला शिक्षण और छात्र का तात्काल्य बड़ा सीधा व सरल अनवरत होना चाहिये इसमें लेखात्मक भी स्वार्थी स्वभाव छात्र के लिये आहितकर हो जाता है और एक कला अध्यापक की शिक्षण की छवि धूमिल हो जाती है जिससे समस्त कला जगत को समाज में लिपिज्ञ होना पड़ता है।

सर्वप्रथम अगर हम ध्यान से देखें तो हमें महसूस होगा कि जिस छात्र में कला के प्रति अनुभव नहीं है। वह कभी किसी भी स्थिति में कलाकार या कला प्रेमी नहीं हो सकता और इसका सीधा सम्बन्ध कला शिक्षक से होता।
है। अगर कला शिक्षक वास्तव में एक आदर्श कला शिक्षक हैं तो उसका यह दायित्त्व और धर्म हो जाता है कि वो येन-केन प्राकारण छात्र में कला के प्रति अनुराग जागृत करे।

डॉ० सरन के अनुसार उनका कहना है कि जब तक कला के छात्र में कला के प्रति अनुराग की भावना उत्पन्न नहीं होती, तब तक वह कला का छात्र नहीं बन पाता हैं। इसलिये उनका अनुभव है कि कला शिक्षण का यही प्रथम उद्देश्य होना चाहिये और उसके बाद कला का शिक्षण प्रारंभ करना चाहिये। उनके इस सारांगित व्यक्तव्य से यह सिद्ध हो जाता है कि कला शिक्षण के लिये सबसे महत्वपूर्ण है कि कला के छात्र-छात्राओं में कला के प्रति अनुराग होना परमावश्यक हैं।

कला शिक्षण में अनुकरण

कला शिक्षण में अनुकरण, वास्तव में रीढ़ की हद्दी होती है। क्योंकि जब अनुकरण ही निर्देश नहीं होगा तो चित्र भी सुस्पष्ट एवं प्रभावी नहीं होगा। इसके लिये यह आवश्यक है कि शिक्षण के पूर्णत्व के लिये सटीक अनुकरण की अपेक्षा अपेक्षित है।

डॉ० सरन के अनुसार “डॉ० सरन का अनुभव है कि कला शिक्षण के क्षेत्र में अनुकरण का बहुत विशेष महत्व होता है। इसलिये कला शिक्षक को एक अच्छा कलाकार भी होना चाहिये और कला शिक्षण में कर के दिखाना भी चाहिये। विभिन्न प्रकार के Demonstration Method का प्रयोग करना चाहिये और उसके बाद विद्यार्थियों को अनुकरण के आधार पर स्वतंत्र चित्रण करने की छूट देनी चाहिये। जिनमें उनके अपने भाव महत्वपूर्ण होने चाहिये।”

डॉ० सरन के इन अनुभव विचारों से यह सिद्ध हो जाता है कि कला
शिक्षक में शिक्षण पद्धति कठिन से सरल होकर नहीं बल्कि सरल से कठिन की ओर अग्रसर होनी चाहिए जिससे बालक की रूचि में परतंत्रता न आ पाये।

प्रशिक्षक शिक्षण

कला के शिक्षण में यह अत्यन्त आवश्यक है कि कला शिक्षक प्रशिक्षित होना चाहिए अन्यथा वह किसी भी वस्तु का चित्रण क्रमबद्ध तरीके से नहीं करा सकेगा जो विद्यार्थियों को रूचि लेने में बाधक होगा। इस प्रसंग के सन्दर्भ में डॉ. सरन ने यह बताया कि "कला शिक्षण में कला के शिक्षक को प्रशिक्षित होना चाहिए, न कि उपाधिकारक लोग, जिन्हें कला शिक्षा का ज्ञान ही नहीं होता उनके द्वारा शिक्षण कराना उचित नहीं, क्योंकि यह तो प्रदेर्शक विषय है, इसीलिए चित्रण के सिद्धांतों को जानना तो सरल है लेकिन इनको प्रयोग में लाना तो स्वयं के लिये भी कठिन है, विद्यार्थियों से इनका प्रयोग करना तो बहुत ही कठिन है इसलिये सिद्धांत हो कि कला शिक्षण में सरल रिश्ता ते बालक को धीरे-धीरे बढ़ते जा पर पहुँचाया जा सकता है। जिसको Easty to touch method बताया गया है जैसे स्कैच के बिना ड्राइंग नहीं बन सकती, सही ड्राइंग के बिना चित्र नहीं बन सकता इस प्रकार कला शिक्षण में प्रोत्साहित किया जाता है।

उदाहरण के लिये माध्यमिक शिक्षाओं में कुछ चित्रण सिखाया जाना है तो सबसे पहले छात्रों को उस पुष्टि से सम्पर्क कराया जाना चाहिए अर्थात बगीचे में ले जाकर कई दिनों तक उस पुष्टि की बनावट रंग और मुद्रारता का आनन्द उठाने देना चाहिए फिर उस का लकीर और ड्राइंग बनाना चाहिए। जब सही ड्राइंग बन जाये तब रंग भरवाना चाहिए, रंग भरने के
बाद उसमें अलंकरण के लिये छाया-प्रकाश का प्रयोग किया जाना चाहिये।

इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि शिक्षण में डॉर सरन बिहारी लाल सकसेना के अनुभव परीक्षित है और विद्यार्थियों के लिये हितकर तो है ही साथ ही साथ विद्यार्थियों में कला के प्रति जागृतकर्ता पैदा करने में भी रामप्रेरण है। जबकि वर्तमान समय में कला अध्यापकों में प्रायः इसका अभाव सा नजर आने लगा है मेरी समझ में शायद यह अत्याधुनिक, गतिशीलता या फिर पूर्ण व्यवसायिकता का ही प्रभाव नजर आता है।

कला शिक्षक के रूप में सुधार के सुझाव :-

एक आदर्श कला शिक्षक के रूप में डॉर सरन बिहारी लाल सकसेना अक्सर कभी समाचार पत्र के माध्यम से तो कभी दूरदर्शन के माध्यम से कला और कला शिक्षक के रूप में सुधार के लिए अपने व्यक्तिगत सुझाव देते रहे थे। उन्होंने इसके सुधार के लिए सेमीनारों एवं कला गौरिकों का भी सफल आयोजन किया। जिसमें उनकी कला और कला शिक्षक के रूप में सुधार लाने की कई सुधारात्मक नीतियों को लगभग एक स्वर होकर स्वीकार भी किया गया। जिसके प्रमुख अंश यहां पर प्रस्तुत हैं :-

कला की समझ :

एक कला शिक्षक के लिए कला विषय की सही समझ होनी चाहिये। कला विषय में प्रवृत्ति पद्धति के अनुसार एवं परम्परागत ज्ञान के विषय में जानकारी होना विषेष महत्व रखता है। प्रायः देखा जाता है, कि कला शिक्षक होता तो कला पढ़ाने के लिए हैं, लेकिन उसका कला के प्रति ज्ञान, जैसे सही रेखाओं से रेखांकन करना, रंगों का ज्ञान होना, रंगों की संगति समझना तथा रंगों का क्या प्रभाव होता है, इत्यादि से सब शून्य होता है। वर्तमान में अधिकतर कला शिक्षकों को कला के तत्वों का ज्ञान नहीं है।

सोच प्रबन्ध 2008, बुद्धिलिखित विश्वविद्यालय, ग्यांवी.
A true understanding of drawing is very much required not only to a true art teacher but also for the students of Arts. The concept of drawing is very much required not only for art teachers but also for students of Arts.

विषय के प्रति जागृतकर्ता -

सर्वप्रथम कला शिक्षक के लिए यह परमावश्यक है कि उन्होंने विषय के प्रति उदार एवं जागृत होना चाहिए। क्योंकि इससे कला विषय में और कला के विद्यार्थियों में समय-समय पर आने वाली उदासीनता एवं शिथिलता का ज्ञान होता रहता है। जिसके लिए कला शिक्षक समय रहते हुये अपनी सुधारात्मक प्रक्रिया प्रारंभ करते कला विषय एवं छात्रों में आने वाले दोषों को दूर करने में सक्षम सिद्ध होता है। जब शिक्षक कला विषय की ओर जागृत रहेगा, तभी छात्र में भी कला के प्रति जागृति एवं संवेदना प्रगट होती रहेगी। डॉ. सरन के अनुसार कला विषय के प्रति जागृतकर्ता होना कला शिक्षक के लिए प्राथमिक आवश्यकता है। जो छात्रों में सुधि पैदा करने के लिए उचित आधार स्थापित करता है।
प्रयोगात्मक दृष्टिकोण:

कला का वास्तविक स्वरूप तो मूल रूप में प्रयोगात्मक ही है। क्योंकि कला चित्रकला की प्रक्रिया है। उसमें चित्रकार वहीं प्रकट करता है, जो देखता है। जैसे कोई गवैया पढ़कर नहीं गा सकता है, उसके द्वारा प्रयोगात्मक अभ्यास ही सफल गायक बना बनाता है ठीक इसी प्रकार चित्रकला निर्माता अभ्यास के द्वारा सफल होता है। इसलिए कला शिक्षक को विशेषतौर पर पहले प्रयोगात्मक प्रदर्शन का निर्माण करना चाहिए। झूठ सर्वन के अनुसार चित्रकला का प्रथम स्वरूप तो प्रायोगिक ही है क्योंकि अगर शिक्षक का रेखांकन उचित नहीं होगा तो चित्र में विकृति आना स्वाभाविक ही हो जाता है। अतः कला शिक्षक को स्केच पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

स्वतंत्र भाव चित्रण:

भावों को स्वतंत्र रूप से चित्र के रूप में प्रकट करना स्वतंत्र भाव चित्रण कहलाता है। कला शिक्षक के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह चित्रों में पहले रेखाओं द्वारा चलने, बैठने, नाचने, कूदने, पूजा, भिक्षा तथा रोने व हंसने आदि के भाव प्रकट करने की कोशिश करे। तदोपरांत छात्र एवं छात्राओं में भी स्वतंत्र भाव चित्रण करने की कोशिश करे। तथा मुक्त हस्त रेखाएँ खींचने का प्रयास करायें। जिससे रेखांकन करने में परिपक्वता आ जायेगी। ये सशक्त रेखाएँ भविष्य में एक कला के छात्र के लिए वरदान साबित होगी।

शौच प्रबंध 2008, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, झार्जी, ।
According to Dr. S.B.L. Saxena "Free feeling
Drawing means it is pure drawing for the students to
become an artist. It is soul of drawing.

नव जागरण के प्रति उत्तेजना :

कला विषय या किसी भी विषय में देखें तो नित नये-नये शोध होते
हुये दिखायी पड़ते है । अतः कला शिक्षक के रूप में यह आवश्यक हो
जाता है कि हम छात्रों में सिन्न-सिन्न प्रकार से कुछ नया करके दिखाये
तथा उनमें कला विषय के उत्थान के लिए नित नूतन, आकर्षण पैदा करें।
जिससे उनमें कला के विषय में रूचि पैदा हो तथा चित्रकला में कुछ और
अच्छा करने की ललक पैदा हो। नवानुक नव छात्र-छात्राओं में कला
संस्कृति के प्रति नव-जागरण की उत्तेजना पैदा हो, जो कला के भविष्य को
प्रगति के समान आलोकित करे ।

कला जगत में कला का शिक्षक ही कला के उत्थान और पतन का
प्रथम उत्तरदायी है क्योंकि कुपात्र में कार्य की सिद्धि नहीं होती और बालक
अपने गुरू-रूपी शिक्षक का ही सर्वप्रथम अनुकरण करता है अगर शिक्षक ही
अल्पज्ञ और नीरस है तो छात्र से पूर्ण उपेक्षा अपेक्षित नहीं होगी। इसलिए
समी समानीय कला शिक्षकों से अपेक्षा की जाती है कि वे स्वयं के प्रति पूर्ण
सहानुभूति प्रकट करें। कला विषय का एक उच्च स्तरीय एवं सुसंस्कृतक
आदर्श प्रस्तुत करें।

आदर्शमुख यथार्थवाद :

कला शिक्षक के रूप में सुधार के लिए हमें आदर्शमुख यथार्थवाद का
पक्षधर होना पड़ेगा। इसके लिए हमें आधुनिक कला में आयी विसंगतियों को
दूर करके कला को सुसंस्कृतक एवं परस्परगत करना होगा। जिसमें यथार्थ
की अभिव्यक्ति होगी। डॉ० सरन के अनुसार छात्रों को कला विषय के अध्ययन के प्रति प्रेरित करना। उन्हें संबंधी उन्नतवादीकरण की प्रतीक्षा करना; यही एक कला शिक्षक के लिए आदर्शानुकूल यथार्थ्वाद है।

इस प्रकार कला शिक्षक को ऐसा आदर्श प्रस्तुत करना चाहिये। जो कला समाज के अन्दर इस प्रकार की क्रिया करे कि ठेस न पहुंचे, समाज के बीच स्वातंत्र सुखाय के लिए ही चित्रकला का कार्य न हो बल्कि परान्त सुखाय की भावना से परिपूर्ण जागृत होकर कलाृति का निर्माण करना चाहिये।

चित्रों को बनाने की विधि एवं उदाहरणः

डॉ० एसबीएल० सक्सेना के जीवन में चित्रकला के लिए सदैव समर्पण रहा। चित्रकला! उनका पर्याय रहा है। उन्होंने अपने अब तक के जीवन में नाना प्रकार के सैकड़ों चित्र बनाये, जिनमें मानव चित्रण, दृष्टि-चित्रण, रेखाचित्र, वस्तु चित्रण, प्राकृतिक चित्रण, चित्र संयोजन इत्यादि चित्र बनाये। और उन्होंने यह माध्यम का सफलतम प्रयोग किया। डॉ० सक्सेना चित्रकला में किसी सुन्दरन को स्वीकार नहीं करते थे। वे विचार को समयानुसार बदलते रहते थे। उन्होंने कभी टाइम होने का सहारा नहीं लिया। वे कुछ न कुछ नया करने के लिए हमेशा प्रयोग करते रहते थे। परम्परावादी होने के बावजूद भी वह तीक तो हटकर काम करने के आदर्श हैं।

डॉ० सक्सेना की चित्रण विधि व तकनीक कभी एक सीमा में बंदाकर नहीं रही। उन्होंने चित्रकला में कलाृति के पूर्व रेखांकन को ही अति आवश्यक माना। क्योंकि उनके विचार में सशक्त रेखांकन चित्र की रीढ़ की हदों होती है। इसलिए उन्होंने अपनी चित्रण शैली का प्रारंभ भी अनगिनत
रेखाचित्र बना कर ही किया। 20 से लेकर 30 स्कैच रोज बनाना उनकी आदत सी थी। इसलिए काफी वर्षों तक उन्होंने खूब स्कैच बनाये और स्वयं को रेखाकला की सशक्त रेखाओं के योग्य बनाया। जिससे उनकी चित्रकला उत्तरेंटर प्रभावशाली होने लगी। अब उनका हाथ इतना सज्ज गया कि जब जो चाहा तुरंत बना लिया करते थे। रबड़ का प्रयोग उन्होंने कभी नहीं किया।

रेखाकला के लिए ढूंढ दो सक्सेना ने पेन्सिल, पैन, स्कैच, चाक, कोयला तथा जल रंगों का प्रयोग किया। ढूंढ दो सक्सेना को चित्र बनाने के लिए अब पेन्सिल से चित्र बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। बल्कि सीधे ब्रश से ही रेखाकला कर लिया करते थे। वे बताते हैं कि उन्होंने अपने चित्रण में निम्नलिखित विधियों व तकनीक का प्रयोग किया।

वोश्त तकनीक:

इस तकनीक का प्रारंभ सर्वप्रथम बंगाल स्कूल में हुआ था। इसलिए बंगाली कलाकारों जैसे नन्द लाल बसु, यामिनी राय, इत्यादि ने इस शैली में बहुत काम किया है। इसमें कार्य करने के लिए सर्वप्रथम ब्राइटमेन सीट, हेन्डमेड शीट या कोई भी मजबूत कागज लेकर बोर्ड पिन की सहायता से स्टिक कर लिया जाता है। अब ब्राउन टेप के द्वारा पेपर के चारों कोने चिपककर टेपिंग की जाती है। इसके बाद कागज पर हलके हाथ से ब्राउंग की जाती है। इसमें गाढ़ी लाईंगों को मिटा कर हलका कर देते हैं। इसके द्वितीय चरण में कलर प्लेट में पानी को मिलाकर पतला करके 0 या 1 नंबर के पतले ब्रश से पूरी ब्राउंग करते हैं ताकि हमारा रेखाकला सुस्पष्ट हो जाये। अब एक ट्रे में साफ पानी भरकर कागज पर लगे हुए बोर्ड को ढिंग करते हैं। ताकि कागज अच्छी तरह से गीला हो जाये इसके 10—15 मिनट
बाद बॉर्ड व कागज को पानी में से निकाल लेते हैं और तिरछा करके बॉर्ड का छाया में रख देते हैं, ताकि उसका सारा पानी सूख जाये।

अब इसमें रंग भरने की शुरुआत सबसे पहले बॉर्ड कलर से करते हैं। यदि हमने चित्र में कोई मानव चित्रण बनाया है, तो रंग इस प्रकार से लगाया जाता है कि कागज पर कोई धब्बा न पड़े। उसके बाद वस्त्रों में रंग भरा जाता है। सबसे अंत में बैकग्राउंड या फोरग्राउंड में रंग भरे जाते हैं।

इस प्रकार से सपाट रंग भरने के बाद बॉर्ड को कागज सहित पुनः 10-15 मिनट पानी में रखते हैं। फिर वही पूर्व की तरह छाया में सूखा लेते हैं। पूर्ण रूप से सूखे लेने के पश्चात जहाँ से भी कलर डिप की प्रक्रिया में निकल गया है। वहाँ पर पुनः वही रंग लगाकर सूखाते हैं। फिर से डिप वाली प्रक्रिया करते हैं, इसके बाद कागज के सूखने पर प्रत्येक रंग की थोड़ी गहरी रेखाओं के द्वारा आउटलाइन करते हैं। प्रयास यह करते हैं कि अगर बाल बनाने हो तो एक-एक बाल का आभास हो। इसके बाद जहाँ-जहाँ भी हाइलाइट है, वहाँ साफ़ ब्रश से रंग ढालना चाहिए। ताकि रंग हट जाये और हाइलाइट का आभास हो। अब अलग-अलग जगह जिस रंग की वॉश लगानी हो उस रंग की हल्की ओर गाढ़ी टोन लेकर अधी के करीब पेन्टिंग में गहरा व आधी में हलका रंग हलके हाथ से लगायें जहां दोनों टोन मिले वहां रंग मिक्स हो जाना चाहिए। इसके सूखने के बाद पुनः आउटलाइन करते हैं। टोनिंग को फिक्स करने के लिए भी पानी में डाला जाता है। कभी-कभी टोनिंग कर रंग अधिक निकल जाता है। तो दुबारा इसी प्रकार से टोनिंग की जाती है। वॉश तकनीक में डाँ सक्सेना ने दैनिक जन-जीवन से समन्वित चित्र बनाने जैसे बकरी चराने वाली, प्रतीक्षा आदि।

पेस्टल रंगो का प्रयोग:

शोध प्रबंध 2008, हुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झौंसी.
चित्रकला में पेस्टल रंगो का भी अपना स्विश्वास महत्व है। पेस्टल रंग शीशी के अन्दर अवलोकन के रूप में मिलते हैं। इनका प्रयोग व्यवसायिक कला में विशेष तौर पर किया जाता है। जैसे—पेस्टल बनाने, चार्ट बनाने व सूक्तियाँ लिखने आदि। ये रंग चमकदार और तीव्र होते हैं। पेस्टल प्रायः आपेक्षिक होते हैं। अर्थात आपातकाली होते हैं। इस विधि में सबसे पहले खूंबों कर लेते हैं। तत्परता जो रंग लगाना हो उसे संयोजन के अनुसार लगा लेते हैं। डाँती सर्न ने पेस्टल रंगो में बहुत कम काम किया है।

पेस्टल रंग:

पेस्टल रंगो का प्रयोग बहुत सरल होता है, किन्तु थोड़ी सी भी असाधारण से पूरी पेस्टिंग खराब हो जाती है। पेस्टल कलर दो प्रकार के होते हैं— (1) ऑयल पेस्टल, (2) ड्राय पेस्टल। ऑयल पेस्टल में चिकनाहट होती है। ये शीट पर लगाने के बाद चिपक जाते हैं। पेस्टर शीट की सतह खुरदरी होती है, इससे सबसे पहले शीट को पिन लगाकर बोर्ड में लगा देते हैं, फिर ब्राउन टेप से टेपिंग कर देते हैं। उस पर लाइट पेन्सिल से स्क्रेब करते हैं, फिर उसमें मध्यम तान लेकर रेखांकन स्पष्ट कर देते हैं। डैथ से हल्की तान लेकर डैथ की जगह रंग लगाया जाता है। फिर उसको उंगली सहायता से मिला दिया जाता है। अब डैथ का रंग लेकर डैथ लगाई जाती है। इसमें डैथ के लिए कई रंगों को ले लिया जाता है। बाहर—बाहर से उसका प्रयोग किया जाता है। रंगों को हल्के से उंगली से धिन देना चाहिये ताकि रंग अलग—अलग न रहकर एकसा हो जाये। इसके बाद क्रीम या सफेद रंग अलग—अलग न रहकर एकसा हो जाये। इसके बाद क्रीम या सफेद रंग लेकर हाईलाइट लगानी चाहिये। धरातल में हल्की

शोध प्रबंध 2008, बुन्देलख्यान्द विश्वविद्यालय, जौहरी.
आकृति की जगह गहरे रंग की तान से स्ट्रॉक्स में उभार दिया जाना चाहिए। अन्त में बायी ओर से वटर पेपर पेंटिंग के ऊपर लगाना चाहिए।

ब्राइ केसल रंगों का प्रयोग भी ठीक इसी तरह से किया जाता है।

इन रंगों में ध्यान देने वाली बात यह है कि इन्हें बार-बार धिनना नहीं चाहिए। क्योंकि इससे कागज फटने का डर रहता है। रंग भी गन्दे हो जाते हैं। इसे उंगली से मिलाना चाहिए। पृष्ठभूमि में तो पहले से ही ऊपर और नीचे पेपर लगा देना चाहिए ताकि ब्राइ केसल के हाथ में लगने से कागज गन्दा न हो। इसके अतिरिक्त रंग को पौंड मारकर उठा देना चाहिए। फिर फेविकॉल घोलकर या ग्लोसी मीडियम से इस पर स्प्रे करना चाहिए। इसके बाद इस पर वटर पेपर लगा देना चाहिए।

**तेल रंग:**

इस तकनीक में सर्वप्रथम कैनवास पर टेक्सचर वाइट की दो कोटिंग की जाती है। फिर प्लेट में रंग निकालकर डिपर में 1 भाग अलसी का तेल और दो भाग तारपीन का तेल मिला लिया जाता है। तेल रंगों को करने में सफाई ब्रश का प्रयोग किया जाता है। अब सर्वप्रथम चारकोल स्टिक से ब्राइन कर ली जाती है। अब चैलो ऑकर या बन्ट साइजन को पतला करके फोटोग्राफ के ऊपर रेषांकन कर देते हैं। अब सबसे पहले मध्यम तान का प्रयोग किया जाता है, बाद में डैश्व लगाते हैं। इसके हलका सूखने पर लाइट और हाइलाइट का प्रयोग करते हैं। सूखने के बाद यदि कहीं कोई टेक्सचर देना हो तो देते हैं तथ्यात्मक छाया में सूखाते हैं। इस शैली का प्रयोग डायर सकसना ने सर्वाधिक रूप से किया है।

शोध प्रबन्ध: 2008, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झौर्पी,
टैम्परा:

तरल रंगों से चित्रण की उस विधि को टैम्परा कहते हैं, जिसमें रंगों के घोल में माध्यम के रूप में किसी इमल्सन का प्रयोग किया जाता है। टैम्परा पद्धति के लिए कागज की रंग सोखने वाली तथा कठोर भूमि की आवश्यकता होती है। मोटे कागज के अतिरिक्त हार्डबोर्ड, काष्ठफलक, गैसोपेंट या कपड़े आदि पर भी टैम्परा माध्यम या प्लास्टर ऑफ पेरिस का गाढ़ा घोल को हार्डबोर्ड, काष्ठफलक, मोटे कागज, दीवार या कपड़े आदि पर एक सा फैला दिया जाता है। अब पूरे चित्र का अनुरंधन बनाकर उसी गैसोपेंट पर रखकर उस पर राख की पतली तह लगायी जाती है। टैम्परा चित्रण में धरातल का रंग निकरकर उठने लगते हैं। टैम्परा पद्धति में रंगों का मिलान छाया प्रकाश दिखाने के लिए नहीं किया जाता है, बल्कि इसमें हुए उतार-चढ़ाव को तिरछी रेखाओं तथा सामान्तर रेखाओं के द्वारा बिन्दुओं या लूसिका स्पर्शों के प्रयोग की विधि या ऐचिंग से दर्शाया जाता है। इस विधि में गहरे रंग का प्रयोग आरम्भ से ही किया जाता है। ऊपर से चित्र को तैल रंगों के चित्रण से पूरा किया जाता है। ड्ओ सक्सेना ने भी टैम्परा में अनेकों चित्र बनाये जिनमें प्रमुख हैं— नववधु, बहू की मूंह दिखायी आदि।

ड्ओ सरन ने लगभग हर माध्यम में काम किया है। लेकिन तैल माध्यम विधि ही उनका आकर्षण रही है। ड्ओ सरन नन्द लाल बसु की तकनीक एवं बद्रीनाथ आर्य की वाटर कलर से बहुत प्रभावित रहे। उन्होंने चित्रण से पूर्व रेखांकन को विशेष महत्व दिया उनके अनुसार चित्रण के लिए सबसे पहले फार्म एवं ड्राइंग का ज्ञान आवश्यक है। उनकी रेखाओं बोल्ड और सशक्त हैं। उनका अनुभव है, कि पहले रेखा, बाद में रंग है। उन्होंने रंगों में हमेशा प्राथमिक रंगों को महत्व दिया। ड्ओ सरन को हमेशा चटकीले
व साफ रंगों से लगाव रहा। अक्सर देखने में आता है कि आपने, अपने चित्रों में लाल, पीले, नीले रंगों को बहुतायत मात्रा में प्रयोग किया है। आपका मानना है कि सादा व उच्च विचारों वाला विश्व को सदैव प्योर कलर का प्रयोग करता है। कलुषित विचारों वाला विश्व हमेशा निराशावादी रंग जैसे काला का प्रयोग करता है। डॉ० सरन ने अपने चित्रण में रंगों का प्रयोग मनोवैज्ञानिक प्रभावों को ध्यान में रखकर किया है। डॉ० सरन में विविध रंगीय अमूर्तता को सहजता प्रदान करने की शक्ति है। आपके चित्र संसार का साक्षात्कार करते प्रतीत होते हैं। गाढ़े और आकर्षक रंग समूह में वे अपनी भावनाओं को प्रकट करने में सदैव तत्पर रहते हैं। डॉ० सरन की धार्मिक प्रवृत्ति होने के कारण नारंगी रंग विशेषतया प्रिय है। ये रंग हमें उनकी चित्रण शैली में नहीं बल्कि उनकी सम्पूर्ण जीवनशैली में भी देखने को मिलते है।

प्रारम्भ से ही उन्हें किसी प्रकार का कोई बन्धन स्वीकार नहीं था। उनकी पूर्ण जीवन शैली एक आजाद पक्षी की तरह रही है। उन्होंने अपने चित्रों में बुर्ज का ही प्रयोग किया। आपका मानना है कि कठोर बालों वाले बुर्ज हमेशा रंगों को खुरचते ही हैं। डॉ० सरन को उंगली और अंगूठे से भी पैटर्न करने का अच्छा अभ्यास है इस पद्धति का प्रयोग उन्होंने सर्वप्रथम 30 वर्ष पहले उस समय किया था, जब वे मधुरा वृद्धावन घूमने गये थे। वहाँ 12 बजे से 3 बजे तक हार्ड बोर्ड पर स्टूडेंट क्वालिटी के ऑयल रंगों में उंगली और अंगूठे की सहायता से एक दृश्य-चित्र का निर्माण किया था। क्योंकि वहाँ उन्हें ब्रश उपलब्ध नहीं हो पाये थे। तब से उन्होंने इस विधि से निरंतर चित्रण अभ्यास किया। उंगली और अंगूठे से पोटेट्र बनाने में भी दक्षता हासिल की।

शोध प्रबन्ध 2008, कुंदलखण्ड विश्वविद्यालय, झारसी.
इस प्रकार उनके चित्रण व तकनीक की चर्चा करते हुये मैंने अनुभव किया कि डॉ. सकसेना जहाँ एक और सच्चे साधक के रूप में कला के द्वारा परमानन्द की प्राप्ति कर रहे हैं, वहीं दूसरी तरफ कला को जन साधारण को कला के उच्च न्यास तक उठाने तथा उनमें सौन्दर्य दृष्टि उत्पन्न करने का प्रयास कर रहे हैं। उनका विचार है कि चित्रकला की प्रकृति अनुकृति नहीं है। नकल का ना तो कोई अर्थ होता है न कोई प्रयोजन। कला एक सृजनात्मक क्रिया है। जो चित्रकार के अपने स्वभाव व अन्त्यायिता पर निर्भर करती है। कला में वे सरलता और सत्यता का गुण परम आवश्यक मानते हैं, ताकि जनसाधारण उसे आसानी से समझ सके।